SHODHPATRA: INTERNATIONAL JOURNAL OF SCIENCE AND HUMANITIES
E-ISSN: 3048-6041 | Volume- 2, Issue- 8 | August 2025

ग्रामीण और शहरी स्त्री जीवन का अंतर्विरोध : गीता श्री की कहानियों का विश्लेषण

डॉ. नीता त्रिवेदी [1], शक्ति वर्धन आर्टिस्ट [2]

[1] शोध निर्देशिका, सहायक आचार्य, हिंदी विभाग, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय उदयपुर (राज.)

[2] शोधार्थी, हिन्दी विभाग, सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी संकाय, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)

शोध सार

समकालीन हिंदी कथा-साहित्य स्त्री जीवन के जिन बहुविध परतों को उद्घाटित करता है गीता श्री की कहानियाँ उन्हीं परतों को ग्रामीण और शहरी स्त्री के अनुभवों की ऐसी दृष्टि से प्रस्तुत करती है जहाँ वह पीड़िता होने की सीमा पार कर जागरूक, संघर्षशील चेतना के रूप में उभरती है। ग्रामीण और शहरी स्त्री दोनों ही शोषण, सत्ता, यौनिकता, असुरक्षा और आत्मबोध के सवालों से समान रूप से रूबरू होती हैं। उनकी कहानियाँ में स्त्रियाँ मौन, विद्रोह, प्रेम या आत्मस्वीकृति के रास्ते अपनी अस्मिता खोजती है जिससे स्पष्ट होता है कि स्त्री अनुभव का निर्धारण स्थान परिवर्तन से अधिक उसकी चेतना, सामाजिक दृष्टिकोण और सांस्कृतिक मान्यताओं पर निर्भर है। करुणा, व्यंग्य, गहराई और आत्मसाक्षात्कार की शक्ति के साथ गीता श्री स्त्री की संपूर्ण मानवीयता और जिजीविषा को रुपायित करती है जिससे यह शोध-पत्र साहित्यिक और वैचारिक दोनों ही स्तरों पर समृद्ध होता है।

बीज शब्द- स्त्री विमर्श, अस्मिता, सामाजिक अंतर्विरोध, आत्मबोध, स्त्री स्वतंत्रता, मौन प्रतिरोध, यौनिकता, पितृसत्ता, संवेदना, आत्मस्वीकृति।

समकालीन हिंदी कथा-साहित्य में स्त्री एक सशक्त वैचारिक उपस्थिति के रूप में पारंपरिक छवियों को चुनौती देती हुई एक नये स्वरूप की खोज में संलग्न है जो सवाल उठाती है, प्रतिरोध करती है और अपने निर्णय स्वयं लेने की क्षमता रखती है। गीता श्री जैसे रचनाकारों ने इस नई स्त्री को साहित्य में विविध सामाजिक, सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक संदर्भों में प्रस्तुत किया है। ग्रामीण और शहरी स्त्री जीवन का अंतर स्थानगत होने के साथ ही सामाजिक संरचनाओं और मानसिक दबावों से जुड़ा हुआ है। जहाँ एक ओर ग्रामीण स्त्री पारिवारिक, धार्मिक और सामुदायिक निगरानी में जीवन जीती है वहीं शहरी स्त्री स्वतंत्र होते हुए भी सामाजिक मानकों और मानसिक तनावों से जूझती है।

ग्रामीण स्त्रियाँ शोषित भी है और अधिकारों के प्रति सजग भी लेकिन उनका अधिकार क्षेत्र शहरी और शिक्षित स्त्रियों के अधिकार से अलग है। कहा यह भी जाता है कि ग्रामीण स्त्रियाँ महानगरों की स्त्रियों की अपेक्षा अधिक शोषित है। सवाल यह उठता है कि ऐसा क्यों है? क्योंकि वो भी स्त्री है और चूंकि ग्रामीण स्त्रियां आज भी ज्यादातर शिक्षित नहीं है वो आज भी शिक्षा से वंचित है इस लिहाज से ग्रामीण स्त्रियाँ ज्यादा शोषित और दमित हैं समाज द्वारा भी और व्यवस्था द्वारा भी। समकालीन साहित्य में यदि हम स्त्री विमर्श का अध्ययन करते हैं तो ग्रामीण स्त्रियों की दशा से वंचित रह जाते हैं।"[1]

प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य ग्रामीण और शहरी स्त्री जीवन रूपों में निहित अंतर्विरोधों को पहचानना, उन्हें समझना और यह विश्लेषण करना है कि साहित्य इन अंतर्विरोधों को किस प्रकार स्वर देता है। यह शोध पत्र यह भी जाँचने का प्रयास करेगा कि गीता श्री की स्त्रियाँ अपने निर्णयों में कितनी स्वायत्त है और समाज उनके इन निर्णयों को किस दृष्टि से देखता है। साथ ही यह भी विवेचन किया जाएगा कि इन दोनों जीवन रूपों की स्त्रियों के बीच क्या कोई साझा मंच, साझा पीड़ा या साझा चेतना विकसित होती है या वे एक-दूसरे से पूरी तरह भिन्न हैं।

यह स्थिति इस मूल प्रश्न को जन्म देती है कि क्या स्त्री की स्वतंत्रता केवल भौगोलिक या आर्थिक परिवर्तन से संभव है या उसके लिए गहन मानसिक और वैचारिक परिवर्तन की आवश्यकता है। गीता श्री की कहानियाँ इस द्वंद्व को बेहद सूक्ष्म, संवेदनशील और यथार्थपरक ढंग से प्रस्तुत करती हैं। उनके पात्र चाहे वे किसी गाँव की दलित स्त्री हो या किसी महानगर की अकेली पेशेवर महिला अपने अनुभवों के माध्यम से एक साझा स्त्री अनुभव का निर्माण करते हैं। "मेकिंग ऑफ बबीता सोलंकी में परिवार और इज्जत की कीमत पर आगे बढ़ने की ललक और बदनामी के अन्तर्द्वन्द्व के बीचं उभरते दर्द की ओर ध्यानाकर्षित किया गया है जबकि ड्रिम्स अनलिमिटेड में प्रतिभा और प्रेम के नाम पर भावनात्मक शोषण की ओर।"[2]

ग्रामीण और शहरी स्त्री जीवन के इस अंतर्विरोध को केवल सामाजिक संरचनाओं के आधार पर नहीं देखा जा सकता बल्कि यह विरोधाभास गहरे मनोवैज्ञानिक स्तरों पर भी सक्रिय रहता है। स्त्री चाहे किसी भी परिवेश की हो अपने भीतर लगातार टकराते हुए अनुभवों, इच्छाओं और उत्तरदायित्वों के बीच संतुलन बनाने की कोशिश में थकी रहती है। गीता श्री की कहानियाँ इस थकान को एक तीखी आलोचना और बौद्धिक परिपक्वता से दर्ज करती हैं। उनके पात्र अपने संघर्षों को समझदारी, सवाल, व्यंग्य और आत्मविश्लेषण के साथ जीते हैं। यह बात उन्हें समकालीन स्त्री लेखन में विशेष बनाती है।

"लिट्टी चोखा और अन्य कहानियाँ में ग्रामीण बोली, वाणी की रस गंध आती है जिसमें स्थानीय जीवन संदर्भों की छटा गहरे रूप से रची-बसी है। इस संग्रह की कहानियाँ कभी मिथिला के समृद्ध सामाजिकता की याद दिलाती है तो कभी इनमें विस्थापन का दर्द सुनाई पड़ता है। वहीं राजा बाबू और पमपम बाबू जैसे कलाकार को अपनी पहचान नहीं मिलती है। लेडिज सर्कल कहानी में ग्रामीण, कस्बाई स्त्रियों की बेबाकी एवं खुलेपन का चित्रण किया गया है। प्रार्थना के बाहर कहानी संघर्षरत दो स्त्रियों की कहानी है जिन्हें जिंदगी अलग ही दिशा में ले जाती है।"[3]

गीता श्री की कहानियाँ नारी विमर्श के किसी एक ढांचे में नहीं आती बल्कि वे उस ढांचे को ही बार-बार चुनौती देती हैं। उनके लेखन में स्त्री एक जटिल सामाजिक, भावनात्मक और बौद्धिक इकाई है जो पितृसत्ता, धर्म, भाषा, जाति और वर्ग जैसे अनेक कारकों से प्रभावित होती है। उनके पात्र अपने छोटे-छोटे निर्णयों के माध्यम से भी बड़े सामाजिक विमर्शों को छूते हैं। नामर्दी की दवा वाया लेडीज़ सर्कल जैसी कहानी में शहरी स्त्री अपने यौनिक अधिकारों को लेकर जिस प्रकार की अभिव्यक्ति देती है वह स्त्री विमर्श को एक नई दिशा प्रदान करती है। वही अन्हरिया रात बैरनिया हो राजा जैसी कहानी में ग्रामीण स्त्री की व्यथा-कथा एक सामूहिक पीड़ा और सामाजिक अन्याय की अभिव्यक्ति बनकर सामने आती है।

स्त्री का जीवन विविध परिस्थितियों से उपजी जटिलताओं, अंतर्विरोधों और अपेक्षाओं का समुच्चय है। गीता श्री की कहानियाँ इस जटिलता को बहुत बारीकी और संवेदनशीलता से प्रस्तुत करती है विशेषकर तब जब वह ग्रामीण और शहरी स्त्रियों के अनुभवों, उनकी आकांक्षाओं और प्रतिरोधों को रचती हैं। उनका लेखन यह सोचने पर विवश करता है कि क्या शहरी स्त्री वाकई ग्रामीण स्त्री से अधिक स्वतंत्र है या वह सिर्फ एक अलग प्रकार की बेड़ियों में जकड़ी हुई है? ग्रामीण स्त्री का जीवन एक स्पष्ट सामाजिक ढांचे में बंधा होता है जहाँ परिवार, जाति, धर्म और परंपरा जैसे तत्व उसकी हर गतिविधि को नियंत्रित करते हैं। वह खेतों, चौपाली, कुओं और रसोई के बीच अपना जीवन जीती है जिसमें उसका शरीर, उसकी इच्छाएँ और उसकी सोच तक सामूहिक निगरानी के अधीन होती है।

उसकी आवाज अक्सर दबा दी जाती है या फिर वह खुद चुप रहना सीख जाती है क्योंकि उसे यह सिखाया गया है कि स्त्री का मौन ही उसकी मर्यादा है। गीता श्री की कहानी अन्हरिया रात बैरनिया हो राजा में ग्रामीण स्त्री की यह पीड़ा और चुप्पी बखूबी अभिव्यक्त होती है। यह कहानी सम्पूर्ण सामाजिक ढांचे का अनावरण है जो स्त्री के शरीर को सत्ता, हिंसा और नियंत्रण का उपकरण बना देता है। यहाँ ग्रामीण स्त्री की बेबसी आर्थिक, शैक्षणिक, मानसिक और सामाजिक सभी स्तर पर जकड़ी हुई है जहाँ वह स्वयं को दोषी मान बैठती है।

कहानी की ग्रामीण नायिका कामिनी अपने पति के दूर शहर जाने से उग्र उन्मादक हो गई है। हिस्टीरिया रोग की शिकार वह स्त्री सामाजिक अंधविश्वास के चलते मानसिक रूप से विघटित पात्र में लोगों के द्वारा तब्दील कर दी गई है। उसके हृदय में कभी कैसी ने उतरने की कोशिश नहीं की है। वह तो बस "काई के नीचे पानी को साफ करना चाहती थी, वह नदी बनकर रहना चाहती थी।"[4] दूसरी ओर शहरी स्त्री का जीवन बाह्य रूप से स्वतंत्र दिखाई देता है जहाँ वह नौकरी करती है, फैसले लेती है, अकेली रहती है, यात्रा करती है लेकिन उसके भीतर भी एक गहरा अकेलापन, एक निरंतर निगरानी और आत्मसंदेह की छाया बनी रहती है।

जीरोमाइल कहानी की शहरी परिवेश में जन्मी पात्र राजवंती अपने जीवन में आर्थिक स्वतंत्रता का महत्व समझती है। वह कहती है कि "एक-एक पैसे के लिए आपके आगे हाथ नहीं फैलाएंगे। मेरे हाथ भीख मांगने के लिए नहीं बने हैं।"[5] लेकिन उसकी स्वतंत्रता एक भ्रम होती है जहाँ वह अपनी देह के माध्यम से स्त्रीकार्यता, प्रेम और पहचान खोजती है लेकिन उसे समाज द्वारा पुनः उसी पुराने स्त्रीत्व की परिभाषाओं में बांध दिया जाता है। गीता श्री की कहानी लाल पीली डायरी इस द्वंद्व को बेहद सूक्ष्मता से पकड़ती है। नायिका एक शहरी महिला है जो अपने भीतर दबी हुई कामनाओं, पुराने संबंधों और वर्तमान जीवन की विडंबनाओं के बीच उलझी रहती है।

ग्रामीण स्त्री और शहरी स्त्री दोनों ही समाज की दो परतों में बसी हुई है लेकिन उनके संघर्षों का स्वरूप और उसकी अभिव्यक्ति अलग-अलग है। ग्रामीण स्त्री प्रतिरोध नहीं करती तो इसका यह अर्थ नहीं कि वह उसे समझती नहीं है बल्कि उसके पास प्रतिरोध के संसाधन, भाषा और अवसर नहीं होते। वह चुपचाप समय की प्रतीक्षा करती है या फिर अपने भीतर एक हिंस्र मौन इकट्ठा करती है जो पीढियों तक उसकी बेटियों में रिसता रहता है। इसके विपरीत शहरी स्त्री के पास अभिव्यक्ति है, अवसर है लेकिन उसकी लडाई एक आंतरिक विघटन के साथ भी चल रही होती है। वह अकेली है, असुरक्षित है और हर क्षण अपने अस्तित्व को प्रमाणित करने में लगी रहती है। गीता श्री की कहानी नामर्दी की दवा वाया लेडीज सर्कल इस द्वंद्व का तीखा और बौद्धिक विश्लेषण प्रस्तुत करती है।

एकांत कहानी में नायिका के शहरी जीवन एवं पितृसता के अंतर्द्वद्व को स्पष्ट रूप से उभारा गया है। नायिका एकाकी जीवन जीती है लेकिन यह अकेलापन उसके आत्मनिरीक्षण और आत्मनिर्भरता का क्षेत्र बन जाता है। वह विवाह, परिवार और मातृत्व के बिना भी स्वयं को संपूर्ण मानती है। यह स्थिति पारंपरिक समाज की दृष्टि में अस्वीकार्य है लेकिन वही स्त्री एक नया विमर्श प्रस्तुत करती है कि स्त्रीत्व का केन्द्र केवल परिवार या संबंध नहीं बल्कि उसकी आत्मबुद्धि और आत्मस्वीकृति है। "लेखिका प्रभावी ढंग से परत दर परत अपने पात्रों के सहारे अपने समाज के मनोविज्ञान का भी अध्ययन बखूबी करती है और फिर उससे प्रभावित अपने सामाजिकता को भी पुनः विश्लेषित करती हैं।"[6]

ग्रामीण एवं शहरी स्त्री के जीवन के विरोधाभास का एक और रूप भाषा और अभिव्यक्ति का अंतर है। ग्रामीण स्त्री का जीवन बोली, कहावतों और देह की भाषा से जुड़ा होता है। वह अपनी पीड़ा को व्याकरणबद्ध शब्दों में नहीं कहती

उसकी चुप्पी, उसका चेहरा, उसका देह-भाव उसका कथ्य बन जाते है। वहीं शहरी स्त्री लेखिका, प्रोफेसर या कलाकार बनकर अपने अनुभवों को लेखन, कला या बहस में बदल देती है। लेकिन क्या यह अभिव्यक्ति उसे मुक्त कर देती है? शायद नहीं। प्रार्थना के बाहर में यही प्रश्न उभरता है कि क्या स्त्री की प्रार्थना, उसका प्रेम, उसका अपराधबोध किसी पवित्रता की मान्यता से बंधा है? और यदि वह उस दायरे से बाहर जाती है तो क्या उसे जगह मिलेगी? यह कहानी शहरी स्त्री की उस छटपटाहट को प्रकट करती है जहाँ नैतिकता, प्रेम और स्वीकृति के बीच लगातार घर्षण होता है।

ग्रामीण व शहरी दोनों ही स्त्रियों के अपने-अपने ढंग से किसी न किसी किस्म की दमनकारी संरचना से जूझने को गीता श्री ने बहुत ही तीव्रता और करुणा के साथ प्रस्तुत किया है। उनकी कहानियाँ किसी वर्ग विशेष की ओर झुकी हुई नहीं वरन् स्त्री के संघर्ष को उसकी सामाजिक स्थितियों के अनुरूप समझने की ईमानदार कोशिश करती है। ग्रामीण स्त्री अपने शोषण को भाग्य मानकर स्वीकार कर लेती है और यही स्वीकार्यता उसे स्थिर तो रखती है लेकिन आत्मविकास से वंचित भी करती है। "हम लोग इसी में खुश है। जिस हाल में पति रखता है, वही ठीक है। हर काम के लिए पति है न? डॉक्टर के पास जाने से लेकर सब्जी लाने तक.... हम लोग रहेंगे हमेशा मिसेज सिंह....., मिसेज शर्मा, मिसेज गुप्ता।"[7]

गीता श्री की कहानियाँ इस सांस्कृतिक जड़ता को तोड़ने की प्रक्रिया को दिखाती है जहाँ स्त्री धीरे-धीरे प्रश्न करना शुरू करती है, वह चुपचाप सुनना छोड़कर अपनी बात रखने लगती है। शहरी स्त्री विचार और अभिव्यक्ति के माध्यम से जब स्वयं अपने निर्णय लेती है तो समाज हर निर्णय की कीमत उससे वसूलता है। विवाह करना या न करना, माँ बनना या न बनना, करियर के लिए शहर बदलना ये सब निर्णय उसे नैतिकता के कठघरे में खड़े कर देते है। कहानी जीरो माइल एक ऐसी ही स्त्री की कहानी है जो खुद को बार-बार मिटाकर नया रूप देने की कोशिश कर रही है। वह स्त्री जो बाहर से आत्मविश्वासी और व्यवस्थित दिखती है, भीतर से बिखरी हुई है। यह बिखराव केवल उसके व्यक्तिगत जीवन की विफलताओं से नहीं आया बल्कि उस निरंतर संघर्ष से है जहाँ उसे हर जगह खुद को योग्य और उचित सिद्ध करना पड़ता है।

"कैद बाहर उपन्यास की माया, मालविका, शशांक की माँ, डिलाइला, सिन्दूरी, संचिता आदि के माध्यम से लेखिका ने स्त्रियों को परतंत्रता की बेड़ियों को तोड़ते दिखाया है। “कैद से बाहर निकल स्वच्छंद जीवन यापन करने का मार्ग बिल्कुल भी सुगम, सरल नहीं है अपितु अतिकंटकाकीर्ण है। स्त्री को समाज से, अपने परिवार से यहाँ तक कि अपने आप से भी लड़ना पड़ता है क्योंकि वर्षों की दकियानूसी, जर्जर कुप्रथाओं ने उसके अन्तर को घेर रखा है, सदियों से वह पुरुष आश्रयी रही है अतः उन्मुक्त आकाश में अपने पंख फैलाने के लिए आवश्यक है स्त्री की आर्थिक स्वनिर्भरता।"[8]

शहरी स्त्री की आकांक्षाएँ अधिक है लेकिन वही आकांक्षाएँ उसके भीतर संघर्ष का नया क्षेत्र खोलती है। उसे प्रेम चाहिए लेकिन वह प्रेम उसे स्वतंत्रता से वंचित न करे, उसे परिवार चाहिए लेकिन वह उसकी पहचान को निगल न जाए; उसे सामाजिक स्वीकृति चाहिए, लेकिन उसकी कीमत आत्मसमर्पण न हो। इसके विपरीत ग्रामीण स्त्री का प्रेम कई बार बलिदान में बदल जाता है। वह समाज के आदेशों के विरुद्ध जाकर प्रेम नहीं कर सकती क्योंकि उसका जीवन पहले से ही परिवार, जाति और मान-मर्यादा के बोझ से दबा होता है। अगर वह प्रेम करती भी है तो उसकी परिणति सामाजिक बहिष्कार, मानसिक प्रताड़ना या हिंसा के रूप में होती है। गीता श्री की कहानियाँ इस प्रेम को केवल करुणा के रूप में नहीं दिखातीं बल्कि उसे एक सामाजिक विद्रोह के रूप में सामने लाती हैं।

गीता श्री की कहानियों में एक खास बात यह है कि वे किसी भी स्त्री को आदर्श या पूर्ण नहीं बनातीं। उनकी स्त्रियाँ गलतियाँ करती है, भ्रमित होती है, कमजोर पड़ती है लेकिन यही उन्हें मानवीय बनाता है। यह मानवीयता ही पाठक को उनके करीब लाती है और स्त्री विमर्श को जीवन के वास्तविक धरातल पर उतारती है। गीता श्री की कहानियाँ नारी जीवन के उन कोनों को उजागर करती है जिन्हें समाज अक्सर अनदेखा करता है या जिन पर नैतिकता की चादर डाल दी जाती है। ग्रामीण और शहरी स्त्री जीवन के बीच जो भीतरी और बाहरी टकराव है यह मात्र सामाजिक पृष्ठभूमि का अंतर नहीं है बल्कि यह उस मानसिक संरचना का प्रतिबिंब है जो स्त्री को उसकी जगह तय करने के लिए सदियों से प्रयत्नशील है।

परी हो, बला हो... जैसी कहानियाँ स्त्री की उस मनोदशा की पड़ताल करती है जहाँ वह स्वयं से संवाद करने लगती है और यह संवाद ही अंततः उसे परिभाषित करता है। गीता श्री की विशेषता यह है कि वे स्त्री की चेतना को उसकी सामाजिक स्थिति के भीतर से उभारती हैं। वे किसी भी वर्ग या परिवेश की स्त्री को दोयम दर्जे की दृष्टि से नहीं देखती। उनकी ग्रामीण स्त्री उतनी ही जटिल, अनुभवी और आत्मगौरव से युक्त हो सकती है जितनी कोई शहरी नायिका। उनका लेखन यथार्थ के भीतर छिपे हुए भावनात्मक और वैचारिक स्तरों को उद्घाटित करता है। उनकी भाषा कभी आक्रोश से भरी होती है तो कभी करुणा से लेकिन उसमें एक स्पष्ट वैचारिक दिशा होती है।

ग्रामीण स्त्री के अनुभवों को लेखिका लोक की सांस्कृतिक गहराइयों से जोड़ती है जबकि शहरी स्त्री के संघर्षों को आधुनिकता की विडंबनाओं से टकराते हुए चित्रित करती हैं। यही द्वंद्व, यही टकराव उनके लेखन को समकालीन हिंदी साहित्य में विशिष्ट बनाता है। उनकी कहानियाँ ग्रामीण और शहरी स्त्री जीवन के अंतर्विरोधों का विश्लेषण मात्र नहीं है बल्कि वे स्त्री के भीतर चल रही उन सूक्ष्म क्रियाओं का लेखा-जोखा है जो उसे धीरे-धीरे मुक्त करती है। यह मुक्ति पीड़ा से बोध की ओर और बोध से प्रतिरोध की ओर एक प्रक्रिया है। यही प्रक्रिया गीता श्री की कहानियाँ में बार-चार दिखती है कभी डायरी के शब्दों में, कभी देह की भाषा में और कभी मौन की तीव्रता में।

उनकी स्त्रियाँ अंततः पाठकों के भीतर सवाल छोड़ जाती है कि क्या हम स्त्री को उसके संपूर्ण अस्तित्व में देख पा रहे हैं? क्या हम उसके अंतर्विरोधों को समझने को तैयार हैं? और क्या हम उसे केवल ग्रामीण या शहरी पहचान तक सीमित रखने के बजाय एक स्वतंत्र मानवीय चेतना के रूप में स्वीकार सकते हैं? “श्रीमती गीता श्री की ग्रामीण भाषा, कला, लोक-संगीत और मिथिलांचल के लोक गीतों पर बहुत अच्छी पकड़ है। इन सबका का सार्थक प्रयोग इन्होंने इस उपन्यास में किया है।”[9]

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि गीता श्री के कथा साहित्य में स्त्री का चित्रण सामाजिक या भौगोलिक पहचान तक सीमित नहीं रहता वरन् वह एक जटिल, संवेदनशील और संघर्षशील सत्ता के रूप में उभरती है जो परंपराओं और आधुनिक चुनौतियों के बीच अपनी पहचान निर्मित करती है। उनकी कहानियाँ ग्रामीण और शहरी स्त्री के जीवनानुभवों को स्त्री संघर्ष की विविध छवियों के रूप में सामने लाती है। यह शोध इस दिशा में संकेत करता है कि स्त्री का अनुभव स्थान, वर्ग या शिक्षा से तय नहीं होता यह उसकी चेतना, आत्मबोध और प्रतिरोध की तीव्रता से आकार ग्रहण करता है और गीता श्री का लेखन इस चेतना को गंभीर साहित्यिक रूप में प्रस्तुत करता है।

संदर्भ सूची-

1. रुचि कुमारी : समकालीन साहित्य में स्त्री विमर्श और ग्रामीण स्त्रियाँ, संगम, ए पीयर रिव्यूड इंटरनेशनल रेफरीड जर्नल, (ISSN : 2321-8037), Vol. 11, Issue 4, गीना देवी शोध संस्थान, 2023

2. सुशील कुमार भारद्वाज : गीता श्री की स्वप्न, साजिश और स्त्री : चकाचौंध, भौतिकवादी जीवन का स्याह पक्ष, सामयिक बुक्स, नई दिल्ली, 2015, पृ. 3
3. रश्मि सिंह : गीता श्री के कथा साहित्य में नारी चेतना का बदलता स्वरूप, विश्वविद्यालय हिंदी विभाग, रांची विश्वविद्यालय, रांची, 2024, पृ. 4
4. गीता श्री : लेडीज सर्कल, राजपाल एंड संस, दिल्ली, 2018, पृ. 54
5. वही, पृ. 34
6. शुभम् मोंगा : गीता श्री द्वारा रचित कहानी संग्रह 'लेडीज सर्कल का समाजशास्त्रीय अध्ययन, महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय, रोहतक (हरियाणा), पृ. 8
7. गीता श्री : कैद बाहर, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 2023, पृ. 65
8. अभिषेक मुखर्जी : जीवन जीने की कथा कहता उपन्यास : कैद बाहर (गीता श्री), शब्दाकंन (ई पत्रिका), 2023, पृ. 1-2
9. विभूती बी. झा : समीक्षा राजनटनी उपन्यास श्रीमती गीता श्री, राजपाल एंड सन्स, नई दिल्ली पृ. 1